

**PROF. (DR) RUKHSANA PARVEEN**  
**HOD, DEPARTMENT OF PSYCHOLOGY**  
**R.R.S. COLLEGE MOKAMA**

CLASS – BA PART- II (H), PAPER - IV

**USES OF INTERVIEW METHODS IN SELECTION**

उद्योगों में कार्मिक चयन हेतु साक्षात्कार का प्रचलन रहा है। यह एक प्राचीनतम एवं सर्वमान्य विधि के रूप में प्रयुक्त होता आया है। वर्तमान युग में सभी क्षेत्रों में साक्षात्कार को अनिवार्य साधन के रूप में प्रयोग में लाया जाता है। यह उम्मीदवार तथा उसकी अनुकूलता (Fitness) को जांच-परखने की एक जीवन्त सामाजिक स्थिति है। इसमें दो पक्ष होते हो। इन पक्षों के बीच की वार्ता ही अन्तिम निर्णय का आधार बनती है।

बिंघम तथा मूर (Bingham & Moore, 1924) ने साक्षात्कार को एक उद्देश्यपूर्ण वार्ता माना है। इन्होंने साक्षात्कार को एक ऐसा चित्र माना जिसके द्वारा साक्षात्कारार्थी को कार्य विशेष के योग्य अथवा अयोग्य घोषित किया जा सकता है। वर्तमान समय में साक्षात्कार के उद्देश्य की भिन्नता को लेकर कई परिवर्तन हुए हैं। भिन्नता के आधार पर साक्षात्कार कभी चयन, कभी मनोवृत्ति, कभी सलाह तो कभी मूल्यांकन आदि हुआ करता है। वाइटेलेस ने साक्षात्कार को आवेदक एवं सेवायोजन पदाधिकारियों के बीच प्रत्यक्ष बातचीत माना है।

वर्तमान में साक्षात्कार केवल सूचना प्राप्ति का ही साधन नहीं बल्कि मापन का भी प्रधान साधन बन गया है। वर्तमान में व्यावसायिक अनुकूलता (Vocational fitness) ज्ञात करने की एक विधि के रूप में इसके कई उद्देश्य प्रकट हुए हैं

- सीधा संपर्क का अवसर मिलना,
- परिकल्पनाओं का स्रोत बनना,
- गुणात्मक तथ्यों को एकत्रित करना,
- व्यक्ति की मौखिक अभिव्यक्तियों का अध्ययन करना इत्यादि।

वर्तमान समय के सन्दर्भ में साक्षात्कार की भूमिका एक शिक्षक तथा साक्षात्कारार्थी के व्यवहार में प्रचलनकर्ता एवं वार्तालाप के सुकोमल प्रोत्साहनकर्ता के रूप में उभरने लगी है। साक्षात्कार पद्धति से यह लाभ होता है कि आवेदक गलत प्रतिक्रियाएं (Fake responses) सरलता से नहीं दे पाते हो। साक्षात्कार की परिस्थिति यदि सुगठित होती है तो यह एक उत्प्रेरक (Big motivator) का भी काम

कर सकती है। सूचना प्राप्ति का यह एकमात्र स्रोत है। साक्षात्कार के समय आवेदक यह संकेत खोजता रहता है कि बातचीत से उस पर क्या प्रभाव पड़ रहा है और साक्षात्कारकर्ता उसके बारे में क्या सोच रहे हो? इन संकेतों द्वारा आवेदक को प्रबलीकरण (Reinforcement) मिलता है। उसका हर अगला व्यवहार इसी प्रत्यक्षीकरण से निर्दिष्ट होने लगता है।

काहन तथा कॅनेल (Kahn and Cannel, 1957) ने साक्षात्कार के अभिप्रेरणात्मक पहलू को विशेष महत्व दिया है। इन्होंने साक्षात्कार की सफलता के लिए इन शर्तों को आवश्यक बताया है-

- पहुंच (Accessibility),
- संज्ञान (Cognition) तथा
- अभिप्रेरण (Motivation)

यदि साक्षात्कार के दौरान ये शर्तें प्रश्न निर्माण, वास्तविक संचालन, उम्मीदवार के मानसिक स्तर, उसकी तत्परता और भाग लेने की इच्छा आदि विविध स्तरों पर पूरी हो जाती है तो इसके फलस्वरूप दिया गया मापन और निर्णय भी बेजोड़ होगा। एक सफल साक्षात्कारकर्ता मृदुभाषी के साथ धैर्यपूर्वक सुनने वाला भी होता है। सारी सूचनाएं साक्षात्कारकर्ता से होकर ही गुजरती है। इसलिए साक्षात्कारकर्ता का यह धर्म है कि वह काम की सूचनाओं को एकत्र करे, सूचना-संकेतों की तौल करे, उन्हें सही रूप से समन्वित करे और अन्त में आवेदक के चयन के बारे में निर्णय पर पहुंचे। साक्षात्कार की रचना वार्तालाप (Conversation) से ही होती है। इसलिए इसकी सफलता भी दोनों पक्षों की वार्तालापीय कौशल से निर्धारित होगी। किसी अप्रत्याशित घटना के द्वारा कभी-कभी साक्षात्कार के दौरान स्थापित अनुबंध बिगड़ जाये तो ऐसी स्थिति में पुनः नए सिरे से संतुलन खोजने की स्थिति आ जाती है। उद्योगों में साक्षात्कार का चिकित्सात्मक उपयोग भी होने लगा है। सभी जगह संरचित साक्षात्कार (Structured interview) का उपयोग किया जाता है।

वर्तमान में साक्षात्कार के सिद्धान्त और व्यवहार में अपार परिवर्तन हुए हैं। सायमंड्स (Symonds, 1939) ने साक्षात्कार की सफलता हेतु चार कारकों को महत्व दिया है-

- (१) आवेदन में निहित कारक
- (२) साक्षात्कारकर्ता में निहित कारक
- (३) साक्षात्कार के परिस्थिति संबंधी कारक
- (४) साक्षात्कार में प्रपत्र (फॉर्म) और विषय संबंधी कारक

विधि की अंतिम सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि कर्मचारी संरक्षण, दूसरों की गोपनीयता के लिए आदर तथा प्राप्त सूचनाओं का सही उपयोग किया जाए तो साक्षात्कार विधि औद्योगिक समस्याओं के अध्ययन हेतु अमूल्य धरोहर सिद्ध हो सकती है।

## साक्षात्कार की प्रमुख त्रुटियाँ

साक्षात्कार विधियों में त्रुटियों के कारण इस प्रणाली में पूरा भरोसा करना कठिन है। निरीक्षण से स्पष्ट है कि उम्मीदवारों का मूल्यांकन करने में विभिन्न साक्षात्कारकर्ताओं द्वारा प्रचुर भिन्नताएं सामने आती हैं। साक्षात्कार एक सर्वाधिक आत्मनिष्ठ (सब्जेक्टिव) विधि है। चूंकि मूल्यांकनों में सतत अनुरूपता नहीं होती, इसलिए इस विधि को विश्वसनीय नहीं माना जा सकता। जो विधि विश्वसनीय नहीं है, वह सत्य होने का दावा भी नहीं कर सकती है।

स्कॉट (Scott), हालिंगवर्थ (Holling wroth, 1922) तथा वैनगर (Wanger, 1949) आदि ने इस पर अध्ययन किया। सभी ने इस विधि की विश्वसनीयता पर भरोसा पूर्ण रूपेण नहीं किया है। साक्षात्कार की कुछ प्रमुख त्रुटियां इस प्रकार हैं-

### अनुकूलित प्रतिक्रियाएं (Conditioned Reactions)

अधिकांश साक्षात्कारकर्ता अनजाने में व्यर्थ की बातों के प्रति पूर्व स्थापित अनुकूलित प्रतिक्रियाओं से प्रभावित होते हैं। जैसे- उम्मीदवार की ध्वनि, बोलने का ढंग आदि। अनुकूलित प्रतिक्रिया में हर व्यक्ति अपनी पसंदगी, नापसंदगी व्यक्त करता है किंतु वह इस बात से अवगत नहीं रहता कि उसे किस प्रकार विशिष्ट व्यवहार रुचिकर तथा अरुचिकर प्रतीत होते हैं।

### अनुकूलित प्रतिक्रियाएं (Conditioned Reactions)

व्यक्ति की यह धारणा रहती है कि उम्मीदवार साक्षात्कार के समय अपनी जो आदत प्रकट करेगा, वही हर जगह प्रकट करेगा। लेकिन मनोवैज्ञानिक रूप से इसका कोई ठोस आधार नहीं है। इसलिए सामान्यीकृत आदत में विश्वास के फलस्वरूप किसी निर्णय पर पहुंचना कठिन है। साक्षात्कारकर्ता को इस प्रकार की आदतों से मुक्त रहने की चेष्टा करनी चाहिए अन्यथा इसके निर्णय दोषपूर्ण हो सकते हैं तथा सारे चयन कार्य पर विपरीत प्रभाव पड़ सकता है।

### साक्षात्कारकर्ताओं का अचेतन पूर्वाग्रह (Unconscious bias of Interviewer)

साक्षात्कारकर्ता यथासंभव स्वयं को पूर्वाग्रह से मुक्त रखने का प्रयत्न करता है। लेकिन हर संभव ईमानदारी के बावजूद कुछ ऐसी अचेतन मनोवृत्ति रखता है जिसके फलस्वरूप वस्तुओं, व्यक्तियों तथा घटनाओं के प्रति उसका प्रत्यक्षीकरण और व्यवहार विशेष रूपेण प्रभावित होता है। इसलिए साक्षात्कारकर्ता पूर्णरूपेण इन पूर्वाग्रहों से मुक्त होने का दावा नहीं कर सकता।

## साक्षात्कार के समय सामान्य घबराहट (General Nervousness in Interviewee)

साक्षात्कार के समय आवेदक पूर्णतः उन्मुक्त न रहकर अधिकांश भयभीत दिखते हैं। यह भी संभव हो सकता है कि कोई उम्मीदवार घबराकर अपनी योग्यताओं और विचारों को बोर्ड के समक्ष सही रूप में नहीं रख पाता है। इसके विपरीत दुर्बल आवेदक बार-बार साक्षात्कार देने के कारण बोर्ड को प्रभावित कर लेते हो। उम्मीदवार की योग्यता और उपलब्धि पर ही साक्षात्कार की सफलता निर्भर नहीं करती है बल्कि इस प्रकार की परिस्थितियों का सामना करने की चतुराई और कौशल पर निर्भर करती है। योग्य व्यक्ति भी साक्षात्कार की कला में प्रवीण न होने पर असफल रहता है। इस प्रकार साक्षात्कार प्रणाली पर पूरा भरोसा नहीं किया जा सकता।

### अनुकरण प्रवृत्तियां

इसमें व्यक्ति दूसरों के व्यवहारों तथा शिष्टाचारों का अनुकरण करता है। साक्षात्कार के समय यह प्रवृत्ति बार-बार देखने में आती है क्योंकि साक्षात्कारकर्ता का स्थान उच्च होने के कारण उम्मीदवार अनजाने में उसका अनुकरण कर उससे अपना तादात्म्य स्थापित करने की चेष्टा करता है। साक्षात्कारकर्ता के मित्रता व्यक्त करने पर आवेदक में भी ऐसी प्रतिक्रियाएं उत्पन्न होने लगती हैं। इन्हीं अनुकरणात्मक प्रवृत्तियों को गलत रूप से लेते हैं। फलतः साक्षात्कार में इसके निर्णय भी अयथार्थ होते हैं।

### साक्षात्कार में व्यर्थ शब्दावलियों को परिभाषित करने की असमर्थता

साक्षात्कार में त्रुटियों का सबसे बड़ा स्रोत संभवतः व्यर्थ शब्दावलियों का पूरा-पूरा अर्थ स्पष्ट नहीं किया जाना है। साधारणतः साक्षात्कारकर्ताओं को उम्मीदवारों के शीलगुणों से संबंधित कोई सूची नहीं दी जाती है। यदि यह सूची दी भी जाती है तो शायद ही इन्हें स्पष्ट परिभाषित किया जाता है। स्वभावतः व्यक्तिगत निर्णय तथा व्याख्याओं के लिए रास्ता अधिक खुल जाता है, जिसके कारण उम्मीदवार के चयन के प्रश्न पर साक्षात्कारकर्ताओं में घोर मतभेद हो जाता है। निर्णय संबंधी अशुद्धियों की संभावना बढ़ जाती है।

लेकिन महत्वपूर्ण बात यह है कि उपरोक्त कठिनाइयों के बावजूद भी साक्षात्कार की लोकप्रियता कम नहीं होती है। परस्पर आमने-सामने की इस प्रक्रिया में उम्मीदवार के व्यक्तित्व तथा व्यवहार संबंधी अनेक बहुमूल्य रहस्यों का भी उद्घाटन हो सकता है।

### साक्षात्कार प्रणाली में सुधार के उपाय

साक्षात्कार एक ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा उम्मीदवारों को उनके भावों तथा विचारों को मौखिक रूप से अभिव्यक्त करने का अवसर मिलता है। यह एक उपयोगी प्रणाली है लेकिन इसको उपयोगी चयन-प्रणाली घोषित करने में मुख्यतया दो प्रकार की कठिनाइयां आती हैं-

- (१) अपेक्षाकृत अधिक समय लगना
- (२) आत्मनिष्ठ प्रणाली होना (निर्णय संबंधी अंक प्रदान करने की वस्तुनिष्ठ पद्धति का न होना)

इन कठिनाइयों को ध्यान में रखते हुए सुधार संबंधी सुझाव निम्न हो सकते हैं-

### **साक्षात्कारकर्ता का सतर्कतापूर्ण चयन तथा समुचित प्रशिक्षण**

साक्षात्कारकर्ता की कुशलता ही साक्षात्कार की सफलता पर आधारित होती है। इसलिए आवश्यक है कि साक्षात्कार समिति के सदस्यों का चयन सावधानीपूर्वक करना चाहिए। साक्षात्कारकर्ता को योग्य होना चाहिए। उसमें प्रत्यक्षीकरण की तीक्ष्णता, परिवर्तनशीलता, समायोजनशीलता तथा विविध साक्षात्कार लेने का अनुभव होना चाहिए। उसे साक्षात्कार कला में विशिष्ट प्रशिक्षण भी मिलना चाहिए। इसके बिना साक्षात्कारकर्ता साक्षात्कार को सफलतापूर्वक संपन्न नहीं कर सकता है।

साक्षात्कार के समय इन्हें कोई एक ही प्रणाली अपनाने तथा समान आचार संहिता का पालन करने का प्रशिक्षण मिलना चाहिए। बिंघम तथा मूर (Bingham and Moor) ने भावी साक्षात्कारकर्ताओं के प्रशिक्षण हेतु निम्न परामर्श दिए हैं-

- साक्षात्कारकर्ता को आत्मविश्वास जीतने की रीतियों की जानकारी
- उम्मीदवार को तनावमुक्त तथा सहज स्वाभाविक बनाए रखने में प्रवीणता रखना
- उम्मीदवारों को बातचीत हेतु प्रेरित करना
- उम्मीदवार के दृष्टिकोण तथा चिंतन प्रकृति की शीघ्रता से परख
- साक्षात्कार के समय वक्ता का अभिनय कम तथा श्रोता का अधिक करना
- पूर्वधारणाओं से अवगत रहना एवं उसी अनुरूप छूट देना
- उम्मीदवार की बातचीत से सूत्र निकालना तथा स्वतः उसी से उपयुक्त प्रश्न निकालना

### **साक्षात्कारकर्ता के समक्ष मापने वाली शीलगुण सूची का होना**

शीलगुणों के मापन हेतु वस्तुनिष्ठ पद्धति होनी चाहिए। इसके लिए प्रामाणिक मूल्यांकन मानदंड का प्रयोग अपेक्षित है। मानदंड में जितने भी उपखंड दिखाए जाएं, निर्णय की सत्यता भी उतनी ही अधिक होती है। शीलगुणों की सूची को अनुभव द्वारा, कर्मचारी प्रबंधकों द्वारा व पर्यवेक्षकों द्वारा या तो अग्रिम रूप से तैयार कर लेना चाहिए अथवा सूची का निर्माण कार्य विश्लेषण पद्धति द्वारा होना चाहिए।

### **साक्षात्कार के प्रश्नों का स्पष्ट व पारदर्शी होना**

प्रश्नों का निर्माण दोषपूर्ण नहीं होना चाहिए, जिससे उम्मीदवार को उसका अर्थ समझने में मुसीबत आती हो। साक्षात्कार में सामाजिक प्रश्नों का पूछना वांछनीय है जो इच्छित शीलगुणों से संबद्ध हों।

## साक्षात्कार मात्र एक बैठक न होकर इसका आयोजन एकाधिक बार होना चाहिये

साक्षात्कारकर्ताओं को विभिन्न समूहों में विभक्त होना चाहिए। प्रत्येक उम्मीदवार के समक्ष एक समूह कम से कम एक बार अवश्य साक्षात्कार करे। इससे निर्णय संबंधी अशुद्धियों को कम किया जा सकता है। साथ ही साक्षात्कार की विश्वसनीयता भी बढ़ सकती है। उपयोगी होते हुए भी यह सुझाव शायद ही व्यावहारिक रूप में प्रयुक्त होता है। कठिनाई इस बात की है कि साक्षात्कार में वैसे ही समय अधिक लगता है, जो और बढ़ जायेगा।

## उम्मीदवारों को वस्तुनिष्ठ क्रिया करने का प्रचुर अवसर प्रदान करना

साक्षात्कार मात्र विचार विनिमय ही नहीं है। साक्षात्कार में साक्षात्कारार्थी के बाह्य व्यवहारों को भी प्रोत्साहन मिलना चाहिए। इस स्थिति में साक्षात्कार व्यवहार अथवा परिस्थिति परीक्षणों (Situational Tests) की भांति कार्य करता है।

## साक्षात्कार प्रामाणीकृत हो

आधुनिक मनोवैज्ञानिकों ने अपने अनुभवों के आधार पर यह विचार व्यक्त किया है कि साक्षात्कार विधि में वस्तुनिष्ठ पदों (terms) को सम्मिलित किया जा सकता है। अंक प्रदान करने की विधि भी इसी के सदृश अपनायी जा सकती है। साक्षात्कार में प्रयुक्त पदों के प्रामाणीकरण हेतु प्रत्येक उम्मीदवार से एक ही तरह के प्रश्न किए जायें तो इससे साक्षात्कार का उद्देश्य पूरा नहीं हो पाता है। साक्षात्कार परस्पर मौलिक वार्तालाप की पद्धति है जिसमें बातचीत में नए विचार तथा चिंतन पैदा होते हैं। लेकिन बातचीत की दिशा की पूर्ण भविष्यवाणी करना कठिन होता है। साक्षात्कार को प्रामाणिक बनाने हेतु विवरण सूची (Check list) की एक मानकीकृत प्रति समिति के सदस्यों को दी जाये ताकि उसी के अनुरूप व्यवहार किया जा सके। इस सूची में वांछित शीलगुणों की सूची को अग्रिम बनाकर उम्मीदवार से मिलने वाले गुणों को ही चिह्नित करते हैं। इसे 'साक्षात्कार-कर्मचारी मूल्यांकन प्रपत्र' कहते हैं।

गियन नामक विद्वान ने साक्षात्कार के लिए निम्न व्यावहारिक सुझाव दिए हैं-

1. साक्षात्कार प्रामाणिक हो। इसमें यथासंभव मैत्रीपूर्ण तथा सौहार्दपूर्ण वातावरण होना चाहिए।
2. साक्षात्कारकर्ता के समक्ष मूल्यांकन मानदंड अग्रिम रूप से हो।

यदि साक्षात्कार में सही तरीकों को अपनाया जाये तो इसे व्यावसायिक चयन का महत्वपूर्ण साधन बनाया जा सकता है। ब्लम तथा नेलर के शब्दों में,

*साक्षात्कार हेतु अत्यधिक वैज्ञानिक शोध की आवश्यकता है। जब तक ऐसा नहीं किया जाता तब तक इसकी सत्यता तथा उपयोग हेतु सर्वोत्तम साक्षात्कार विधि में संबंधित बहुत से प्रश्न अनुत्तरित होंगे।*

**PROF. (DR) RUKHSANA PARVEEN**  
**HOD, DEPARTMENT OF PSYCHOLOGY**  
**R.R.S. COLLEGE MOKAMA**

CLASS – BA PART- II (H), PAPER - IV

**FRUDIAN THEORY OF PSYCHOANALYSIS**

मनोरोगी से बातचीत करने के ज़रिये उसका उपचार करने की विधि और एक बौद्धिक अनुशासन के रूप में मनोविश्लेषण की स्थापना ज़िगमण्ड फ़्रॉयड ने की थी। समाज-विज्ञान के कई अनुशासनों पर मनोविश्लेषण का गहरा असर है। स्त्री-अध्ययन, सिनेमा-अध्ययन और साहित्य-अध्ययन ने मनोविश्लेषण के सिद्धांत का इस्तेमाल करके अपने शास्त्र में कई बारीकियों का समावेश किया है। नारीवाद की तो एक शाखा ही मनोवैश्लेषिक नारीवाद के नाम से जानी जाती है। फ़्रॉयड का विचार था कि मनुष्य के अवचेतन को अलग-अलग हिस्सों में बाँट कर उसी तरह से समझा जा सकता है जिस तरह प्रयोगशाला में किसी रसायन का विश्लेषण किया जाता है। अवचेतन का सिद्धांत इस मान्यता पर आधारित है कि मनुष्य को अपने मस्तिष्क के एक हिस्से का खुद ही पता नहीं होता। उसकी अभिव्यक्ति उसके सपनों, बोलते-बोलते ज़बान फिसल जाने और अन्य शारीरिक बीमारियों के रूप में होती है। 1880 के दशक में वियना के एक चिकित्सक जोसेफ़ ब्रेयुर के साथ मिल कर फ़्रॉयड ने बर्था पैपेनहाइम नामक एक महिला के हिस्टीरिया (उन्माद) इलाज किया। मनोविज्ञान के इतिहास में बर्था को उसके छद्म नाम 'अन्ना ओ' के रूप में भी जाना जाता है। जल्दी ही हिस्टीरिया में सेक्सुअलिटी की भूमिका के सवाल पर फ़्रॉयड के बेयुर से मतभेद हो गये। फ़्रॉयड को यकीन था कि मानसिक सदमे की प्रकृति काफ़ी-कुछ सेक्सुअल हो सकती है। इसी तरह के अन्य मरीज़ों का उपचार करने के दौरान हासिल किये गये उनके निष्कर्षों का प्रकाशन 1895 में स्टडीज़ इन हिस्टीरिया के रूप में सामने आया। फ़्रॉयड ने हिस्टीरिया की व्याख्या एक ऐसे दिमागी सदमे के रूप में की जिसे रोगी दबाता रहता है। मनोविश्लेषण द्वारा रोगी को उस सदमे की याद दिलायी जाती है। फ़्रॉयड के बाद मनोविश्लेषण के सिद्धांत का आगे विकास करने का श्रेय ज़ाक लकाँ को जाता है।

फ़्रॉयड को विश्वास था कि मनुष्य अपनी इच्छाओं, यौन-कामनाओं और आवश्यकताओं की पूर्ति में नाकाम रहने पर होने वाली तकलीफ़ के एहसास को दबाता है। इस प्रक्रिया में उसके भीतर अपूर्ण कामनाओं के प्रति अपराध-बोध पैदा हो जाता है जिससे कुंठा, आत्मालोचना और एक सीमा के बाद आत्म-हीनता और आत्म-घृणा की अनुभूतियाँ जन्म लेती हैं। यह तमाम कार्य-व्यापार अवचेतन के

भीतर चलता है। यह अवचेतन हमेशा दबा हुआ नहीं रहता और सपनों के रूप में या घटनाओं के प्रति अनायास या तर्कसंगत न लगने वाली अनुक्रियाओं (जैसे तेज़ रक्रतार से कार चलाना या किसी परिजन पर गुस्सा करने लगना) के रूप में सामने आता है।

फ़्रायड मानस को तीन भागों (इड यानी कामतत्व, ईगो यानी अहं और सुपर-ईगो यानी पराअहं) में बाँट कर देखते हैं। उन्होंने अहं को यथार्थमूलक और आत्ममोह को जन्म देने वाले दो रूपों में बाँटा है। यथार्थमूलक अहं की मध्यस्थता सुख की तरफ़ धकेलने वाले कामतत्व और यथार्थ का समीकरण विनियमित करती है। इसी के प्रभाव में अपनी कामनाएँ पूरी करने के साथ-साथ व्यक्ति सामाजिक अपेक्षाओं पर भी ख़रा उतरने की कोशिश करता है। पराअहं की हैसियत मानस में माता-पिता सरीखी है और वह कामतत्व और अहं पर अपना हुकम चलाता है। यही पराअहं बालक को अपने पिता का प्राधिकार स्वीकार करने की तरफ़ ले जाता है। इसके प्रभाव में पुत्र द्वारा माँ को प्राप्त करने की कामना का दमन किया जाता है ताकि इस प्रक्रिया में वह पिता की ही तरह अधिकारसम्पन्न हो सके। पितृसत्ता इस सिलसिले से ही पुनरुत्पादित होती है। फ़्रायड की व्याख्या के मुताबिक जीवन और जगत के साथ विविध संबंधों में जुड़ने के लिए पुत्र और माँ के बीच का काल्पनिक सूत्र भंग करना ज़रूरी है और यह भूमिका पिता के हिस्से में आती है। पिता के हस्तक्षेप के तहत पुत्र को माँ के प्रति अपनी यौन-कामना त्यागनी पड़ती है। वह देखता है कि पिता के पास शिश्न है जो माँ के पास नहीं है। उसे डर लगता है कि अगर उसने पिता के प्राधिकार का उल्लंघन किया तो उसे भी माँ की ही तरह ही बधिया होना पड़ सकता है। बधियाकरण की दुश्चिंता (कैस्ट्रेशन एंगज़ाइटी) के तहत मातृमनोग्रंथि नामक संकट का जन्म होता है जो फ़्रायड का एक और महत्वपूर्ण सूत्रीकरण है। मातृमनोग्रंथि का संकट बेटे को माँ का परित्याग करने की तरफ़ ले जाता है। माँ के प्रति अपनी अनकही सेक्शुअल चाहत के इस नकार को फ़्रायड ने आदिम आत्म-दमन की संज्ञा दी है। आत्म-दमन के इसी प्रसंग से व्यक्ति के मानस में अवचेतन की बुनियाद पड़ती है।

ज़ाक लकाँ ने फ़्रायड द्वारा प्रवर्तित मनोविश्लेषण पर पुनर्विचार करते हुए सेक्शुअल कामना के दायरे से निकाल कर उसकी प्रतिष्ठा भाषा के दायरे में की। साथ ही उन्होंने आत्ममोह को जन्म देने वाले अहं की बेहतर व्याख्या की जबकि फ़्रायड ने इस पहलू पर ज़्यादा गौर नहीं किया था। लकाँ ने देखा कि फ़्रायड के मुताबिक मातृमनोग्रंथि का शिकार होते समय बालक बोलने की उम्र में आ जाता है। अर्थात् आदिम आत्म-दमन के आधार पर जब उसके अवचेतन की नींव पड़ रही होती है, उस समय कर्ता के रूप में उसके कदम भाषा के प्रदेश में पड़ जाते हैं। यही वह क्षण है जब बच्चा भाषा के ज़रिये कामना के जन्म और दमन से वाकिफ़ होता है। चूँकि कामना कभी पूरी नहीं हो सकती इसलिए वह माँ के रूप में आजीवन अपनी खोयी हुई वस्तु की तलाश करता रहता है। पुत्र और माँ का युग्म तोड़ने के लिए लकाँ ने मिरर- इमेज की भूमिका रेखांकित की है। आईने में



खुद को देख कर अर्थात् अपने ही बिम्ब से साक्षात्कार होते समय उसे माँ के साथ अपने अंतर का एहसास होता है। इस मुकाम तक पहुँचते समय पिता द्वारा बनाये गये नियमों के प्रभाव में भाषा के प्रतीकात्मक संसार में बालक का प्रवेश हो चुका होता है। बिम्बात्मकता से प्रतीकात्मकता में जाने की यह प्रक्रिया लकाँ के अनुसार तीन निर्णायक क्षणों के क्रम में घटित होती है

1. मिरर-इमेज का चरण,
2. भाषा में प्रवेश का चरण और
3. फिर मातृमनोग्रंथि के संकट का दौर।

छह महीने से डेढ़ साल की आयु के बीच माँ बच्चे को जब शीशा दिखाती है तो वह खुद को अलग से पहचान कर अपने एकीकृत और पृथक अस्तित्व से परिचित होता है। लकाँ इसे ही आत्ममोह के क्षण की शुरुआत मानते हैं अर्थात् इसी जगह अहं की आत्ममोह संबंधी किस्म का जन्म होता है और देह प्रेम का लक्ष्य बनती है। लेकिन इसी क्षण एक और घटना होती है। माँ से खुद को भिन्न पा कर वह दो बातें सोचता है। पहली, यह मैं हूँ और दूसरी, मैं माँ के साथ एकमेक न हो कर अन्य हूँ। इसी जगह परायेपन का एहसास जन्म लेता है। बच्चा दर्पण में अपनी जिस छवि को देखता है, वह उसकी सूचक है। पह छवि उसकी इयत्ता न हो कर उसका स्थानापन्न बिम्ब है। लकाँ बताते हैं कि इसीलिए मिरर-इमेज का चरण अहं के विकास की शुरुआत तो बनता है, पर यह बुनियाद एक ऐसी समझ पर रखी जाती है जो यथार्थमूलक नहीं होती।

मनोविश्लेषण की दुनिया में इस बात पर काफ़ी बहस है कि क्या मनोरोगी के मानस तक उससे बातचीत के ज़रिये पहुँचा जा सकता है? क्या मनोरोगी के भीतर मनोचिकित्सक द्वारा की गयी पूछताछ के प्रति प्रतिरोध नहीं होता? इन सवालों का जवाब तलाशने की प्रक्रिया में पैदा हुए मतभेदों के केंद्र में मातृमनोग्रंथि और शिशु-यौनिकता से जुड़े हुए मुद्दे हैं। मनोरोग के रूप में उन्माद को महत्व देने वाले मनोविश्लेषक मातृमनोग्रंथि की पैदाइश के क्षण को कुछ ज़्यादा ही अहमियत देते हैं, जबकि खण्डित मनस्कता (स्किज़ोफ्रेनिया) का विश्लेषण करने वालों की तरफ़ से इसे बहुत कम प्राथमिकता मिलती है।